



भारत में संस्थागत कृषि साख की व्यवस्था

आलोक प्रताप सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग किसान पीजी कॉलेज, बहराइच

Email:- alok.eco@gmail.com

सारांश

साख एक महत्वपूर्ण कृषि आगत है जो कृषि साख के उद्देश्य और समय के आधार पर अलग-अलग प्रकार का हो सकता है। भारत में कृषि साख की आवश्यकता की पूर्ति संस्थागत और गैर संस्थागत दोनों स्रोतों से की जाती रही है। संस्थागत स्रोतों के अंतर्गत सहकारी बैंक, व्यापारिक बैंक और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आते हैं। 1990 तक कृषि साख की आपूर्ति इन्हीं तीन संस्थाओं के माध्यम से होने के बाद भी ग्रामीण आबादी का एक बड़ा हिस्सा गैर संस्थागत स्रोतों पर निर्भर रहा है। 1991 में भारत में आर्थिक सुधारों के कार्यक्रम लागू किए जाने के कारण कृषि क्षेत्र हाशिए पर चला गया। फिर भी इस दौर में नाबार्ड द्वारा 1992 में स्वयं सहायता समूह बैंक लिंकेज कार्यक्रम, 1995-96 में ग्रामीण आधारिक संरचना कोष (RIDF) तथा 1998-99 में किसान क्रेडिट कार्ड को शुरु किया गया। 2005 के बाद से कृषि क्षेत्र को पुनः मुख्य भूमिका में रखा जाने लगा। कृषि साख हेतु पहले से विद्यमान संस्थाओं में आवश्यकतानुरूप समयानुसार परिवर्तन किए गए तथा कुछ नई संस्थाओं की स्थापना की गई।

बीजशब्द— प्राथमिकता वाले क्षेत्र को उधार (PSL), लीड बैंक स्कीम, सूक्ष्म वित्त, किसान क्रेडिट कार्ड (KCC), ग्राउंड लेवल क्रेडिट (GLC)।

कृषि साख एक व्यापक शब्दावली है जिसके अंतर्गत कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों में उत्पादन से लेकर विपणन तक चलने वाली प्रक्रियाओं को गतिमान रखने हेतु किसानों को समयानुसार आवश्यकता पड़ने पर कृषि साख व्यवसाय से जुड़ी हुई विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से पर्याप्त वित्त की उपलब्धता को सुनिश्चित किया जाता है। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों की गतिविधियां ग्रामीण क्षेत्रों में होती हैं अतः इसे ग्रामीण साख भी कहा जाता है। यह एक महत्वपूर्ण कृषि आगत है। 2004-05 की कीमतों के आधार पर 1950-51 में कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों का भारत के सकल घरेलू उत्पाद में हिस्सा 53.1% था जो 2013-14 में घटकर 13.9% रह गया। 2011-12 की स्थिर कीमतों के आधार पर 2021-22 में सकल मूल्यवर्धन में कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों की हिस्सेदारी 16.38% है। स्पष्ट है भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों की



हिस्सेदारी कम हुई है। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों पर आश्रित श्रम शक्ति प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में जहां 1951 में लगभग 70% थी, वही अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 2020 में 41.49% श्रम शक्ति कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों पर निर्भर है।ⁱⁱ राज कृष्णा (१९७६) एस चक्रवर्ती १९७४-७६) और सी रंगराजन(१९८२) अपने अध्ययनों के आधार पर बताते हैं कि कृषि का भारत के औद्योगिक विकास तथा राष्ट्रीय आय से गहरा संबंध है। अगर कृषि उत्पादन में 1% की वृद्धि होती है तो परिणाम स्वरूप औद्योगिक उत्पादन में 0.5% तथा राष्ट्रीय आय में 0.7% की वृद्धि होगी।ⁱⁱⁱ कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। वित्त की उपलब्धता कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों को विकास के रास्ते पर आगे बढ़ने में सहायता प्रदान करती है। कृषि साख की आवश्यकता को भारतीय संदर्भ में दो दृष्टि से देखा जाता है—

१ कृषि साख के उद्देश्य के आधार पर,

२ समय के आधार पर।

कृषि साख के उद्देश्य के आधार पर कृषि साख के तीन प्रकार हो सकते हैं—

क— उत्पादक कार्यों के लिए,

ख— उपभोग संबंधी कार्यों के लिए,

ग— अनुउत्पादक कार्यों के लिए।

उत्पादक कार्यों के लिए ऋण की आवश्यकता बीज, खाद, उर्वरक, कीटनाशक दवाई, मजदूरी, भूमि पर स्थाई और अस्थायी सुधार करने के साथ कृषि उपकरणों को खरीदने के लिए पड़ती है। किसानों को इस तरह के ऋणों को वापस करने में असुविधा नहीं होती है। उपभोग संबंधी कार्यों के लिए ऋण की आवश्यकता तब पड़ती है जब एक फसल की बिक्री के बाद दूसरी फसल के तैयार होने तक किसानों के पास अपने परिवार की उपभोग संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त आय नहीं बच पाती है। प्राकृतिक आपदा के समय इस तरह के ऋण की मांग बढ़ जाती है। अनुत्पादक कार्यों हेतु ऋण आवश्यकता लगान को चुकाने, मुकदमेबाजी और विभिन्न प्रकार के सामाजिक संस्कारों के लिये अक्सर पड़ती है। समय के आधार पर कृषि साख की आवश्यकता को तीन भागों में बांटा जाता है—अल्पकालीन कृषि साख, मध्यमकालीन कृषि साख एवं दीर्घकालीन कृषि साख। अल्पकालीन कृषि साख की आवश्यकता 15 माह से कम की अवधि के लिए बीज, उर्वरक, कीटनाशक दवाई खरीदने के अलावा मजदूरी भुगतान के लिए होती है। मध्यमकालीन कृषि साख की आवश्यकता 15 माह से अधिक एवं 5 वर्ष से कम की समय की अवधि के लिए मुख्य रूप से पशु एवं छोटे औजारों को खरीदने के साथ सिंचाई संबंधी उपकरणों की व्यवस्था करने के लिए पड़ती है। दीर्घकालीन कृषि साख की आवश्यकता भूमि पर स्थाई सुधार करने, नई भूमि खरीदने, नलकूप लगवाने ट्रैक्टर खरीदने के लिए 5 वर्ष से अधिक तथा 20 वर्ष से कम या 20 वर्ष तक की अवधि के लिए होती है। इन दोनों आधारों पर वर्गीकृत विभिन्न प्रकार की कृषि साख को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की संस्थाओं को उनके स्रोत के आधार पर दो भागों में बांटा जाता है—

1 गैर संस्थागत स्रोत,

2 संस्थागत स्रोत

गैर संस्थागत स्रोतों के अंतर्गत साहूकार, भूस्वामी, व्यापारियों एवं कमीशन एजेंट तथा मित्र एवं सगे संबंधी आदि आते हैं। इन पर देश के केंद्रीय बैंक और सरकार का किसी प्रकार का कोई नियंत्रण नहीं होता है। संस्थागत स्रोतों के अंतर्गत जिन संस्थाओं द्वारा कृषि साख की आपूर्ति की जाती है उन पर सरकार का विभिन्न नियामक संस्थाओं के माध्यम से नियंत्रण होता है। इसके अंतर्गत सहकारी बैंक, व्यापारिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सरकार, सूक्ष्म वित्त संस्थान और लघु बैंक को रखा जाता है। कृषि साख की पूर्ति संस्थागत और गैर संस्थागत दोनों स्रोतों के माध्यम से की जाती रही है। स्वतंत्रता से पूर्व संस्थागत साख के अंतर्गत केवल सहकारी साख समितियां आती थी। 1904 में सहकारी समिति प्रावधान



को लाया गया जिसके अंतर्गत प्राथमिक कृषि साख समितियों को कृषि साख वितरण की प्राथमिक एजेंसी के रूप में देखा गया। 1912 में सहकारी साख संस्थाओं को वैधानिकता का दर्जा दिया गया। 1912 से केंद्रीय सहकारी बैंकों की स्थापना प्रारंभ हुई थी। 1915 में मैक्लेन समिति ने प्रांतीय सहकारी बैंक की स्थापना का सुझाव दिया। 1930 में मैक्लेन समिति के प्रयासों के चलते त्रिस्तरीय सहकारी साख संस्था का प्रारूप देखने को मिलता है। इनके द्वारा अल्पकालीन एवं मध्यम कालीन साख जरूरतों को पूरा किया जाता रहा है। दीर्घकालीन साख जरूरतों को पूरा करने के लिए भूमि बंधक बैंकों की स्थापना 1920 में सर्वप्रथम पंजाब के झंग(जो अब पाकिस्तान में है) जिले में की गई।^{iv} 1930–40 की अवधि में कई भूमि बंधक बैंकों की स्थापना की गई। आगे चलकर इन्हें भूमि विकास बैंक का नाम दिया गया। भूमि विकास बैंकों को अब कृषि और ग्रामीण विकास बैंक कहा जाता है। विभिन्न राज्यों में कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों का संगठनात्मक ढांचा अलग-अलग देखने को मिलता है। 1935 से लेकर 1950 तक रिजर्व बैंक ने कृषि साख की अल्पकालिक और दीर्घकालिक जरूरतों को पूरा करने के लिए सहकारी साख संस्थाओं की सक्रिय भूमिका पर जोर दिया। हालांकि इसके बाद भी इस दौर में गैर संस्थागत स्रोतों पर अधिक निर्भरता देखने को मिलती है। 1951 से लेकर अब तक कृषि साख की उपलब्धता और उसके विस्तार हेतु उठाए गए विभिन्न कदमों एवं नीतियों को अध्ययन सुविधा की दृष्टि से रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया द्वारा तीन चरणों में बांटा गया है—

(क) प्रथम चरण (1951–1969),

(ख) द्वितीय चरण (1970–1990),

(ग) तृतीय चरण (1991 से अब तक)

प्रथम चरण (1951–1969)—इस चरण के अंतर्गत आरबीआई और सरकार का पूरा ध्यान संस्थागत साख के रूप में किसानों को सहकारी साख संस्थाओं के माध्यम से अल्पकालीन, मध्यमकालीन एवं दीर्घकालीन जरूरतों को पूरा करना था। 1951 में कृषि साख के अंतर्गत संस्थागत स्रोतों का हिस्सा मात्र 4.2% था जिसमें सहकारी साख संस्थाओं का हिस्सा 3.3% एवं व्यापारिक बैंकों का हिस्सा 0.9% था। गैर संस्थागत स्रोतों का हिस्सा 92.8% था। भारत में सहकारी साख संगठनों का ढांचा त्रिस्तरीय है। राज्यस्तर पर राज्य सहकारी बैंक, जिला स्तर पर केंद्रीय सहकारी बैंक एवं ग्राम स्तर प्राथमिक सहकारी समितियां होती हैं। 10 या 10 से अधिक व्यक्ति मिलकर प्राथमिक सहकारी साख समिति की स्थापना कर सकते हैं। बनाई गई समिति का सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार के यहां पंजीयन करवाना होता है। सहकारी समितियां उत्पादक उपकार्यों के लिए अल्पकालीन ऋण देती हैं। केंद्रीय सहकारी बैंकों का जिले की सारी प्राथमिक सहकारी समितियों पर नियंत्रण होता है और आवश्यकता पड़ने पर उनको ऋण प्रदान करती हैं। केंद्रीय सहकारी बैंकों के ऊपर राज्य सहकारी बैंक होते हैं जो प्रत्येक राज्य में एक होते हैं। सहकारी साख संस्थाओं पर रिजर्व बैंक का नियंत्रण होता है। 1951 में रिजर्व बैंक ने अखिल भारतीय साख सर्वेक्षण समिति का गठन किया। समिति को ग्रामीण साख के स्रोतों का मूल्यांकन करने और ग्रामीण साख प्रणाली के पुनर्गठन के बारे में आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना था। कमेटी ने 1954 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। कमेटी का मानना था की सहकारी साख सबसे सस्ती और अच्छी है, फिर भी सहकारी समितियां कृषको तक साख पहुंचाने में अपर्याप्त हैं। व्यापारिक बैंकों की ग्रामीण साख वितरण के संदर्भ में भूमिका को परिभाषित किया जाना चाहिए। 1963 में रिजर्व बैंक कृषि विकास हेतु मध्यमकालीन और दीर्घकालीन निवेश ऋण प्रदान करने के लिए कृषि पुनर्वित्त निगम (ARC) की स्थापना की। केंद्र राज्य सरकार दोनों ही किसानों को अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन वित्तीय सहायता प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में देती रहती है, इसे तकावी ऋण कहा



जाता है। यह ऋण सामुदायिक विकास विभाग या राजस्व विभाग या फिर सहकारी समितियों के माध्यम से आपातकाल में दिए जाते हैं। 1966 में श्री वी. वेकेटप्पा की अध्यक्षता में अखिल भारतीय ग्रामीण साख पुनरसमीक्षा समिति का गठन किया गया। समिति का सुझाव था कि सहकारी साख संस्थाएं अपना काम करती रहेंगी परंतु व्यापारिक बैंकों को ग्रामीणों साख के विस्तार की दिशा में जोड़ा जाना चाहिए। 1966 में भारत में हरित क्रांति को लाया गया। अब कृषि क्षेत्र को अधिक मात्रा में साख की आवश्यकता पड़नी थी। सरकार ने समिति के सुझाव को मानते हुए जुलाई 1969 में 14 बड़े व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया। जून 1969 में व्यापारिक बैंकों की 8187 शाखाओं में से 1443 शाखाएं जो लगभग 17.6% की ग्रामीण क्षेत्रों में थीं।^v 1969 में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया के सुझाव पर व्यापारिक बैंकों ने "प्रमुख बैंक परियोजना" शुरू की जिसके अंतर्गत बहुत कम बैंकिंग सुविधा वाले क्षेत्रों के प्रत्येक जिले में एक बैंक को "एक प्रमुख बैंक" के रूप में चुना गया। एक प्रमुख बैंक के लिए एक सलाहकार कमेटी होती है जिसमें राज्य सरकार, अनुसूचित बैंकों तथा उस जिले में काम कर रही अन्य वित्तीय संस्थाओं के प्रतिनिधि सम्मिलित होते हैं।

"संस्थागत कृषि साख का एजेंसी वार वितरण (प्रतिशत में)"

एजेंसी	1951	1961	1971	1981	1991
सरकार	3.3	5.3	6.7	4.0	5.7
सहकारी समितियां	3.1	9.1	20.1	28.6	18.6
व्यापारिक बैंक (क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भी शामिल है)	0.8	0.4	2.2	28.0	29.0
कुल संस्थागत साख (प्रतिशत में)	7.2	14.8	29.2	61.2	64.0

स्रोत : All india rural credit survey (1954), All india debt and investment survey various issues. द्वितीय चरण (1970–1990)—इस चरण में संस्थागत कृषि साख के अंतर्गत व्यापारिक बैंकों को शामिल किया गया। राष्ट्रीयकरण के पश्चात व्यापारिक बैंक कृषि साख पर ध्यान देने लगे। जून 1980 में व्यापारिक बैंकों की कुल शाखाएं 32419 थी जिसमें 15105 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों (46.6) में थीं।^{vi} इस चरण में व्यापारिक बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्रों में तेजी से अपनी शाखाओं का विस्तार किया। दिसंबर 1990 में व्यापारिक बैंकों की शाखाएं 59752 थी जिसमें से ग्रामीण क्षेत्रों में संख्या और प्रतिशत दोनों दृष्टि से क्रमशः 34791 और 58.2% था।^{vii} व्यापारिक बैंकों ने अधिकतर साख बड़े किसानों को उपलब्ध कराया है। 1972 में रिजर्व बैंक ने प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को उधार की संकल्पना को परिभाषित किया। इसके अंतर्गत व्यापारिक बैंक अपने समायोजित शुद्ध बैंक ऋण का 40% घोषित प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को देंगे। कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों को 18% ऋण दिया जाएगा। 1970 के दशक के मध्य में रिजर्व बैंक ने ग्रामीणों साख की आवश्यकता तथा उसकी आपूर्ति के संबंध में नरसिम्हन कार्यकारी समूह का गठन किया। कार्यकारी समूह ने बताया कि 1974 में व्यापारिक बैंकों द्वारा कुल ऋण का 6% ग्रामीण साख के रूप में उपलब्ध कराया गया था। सहकारी संस्थाएं छोटे व सीमांत वर्ग के किसानों को साख उपलब्ध नहीं करवा पा रही थी। 2/3 साख की आपूर्ति गैर संस्थागत स्रोतों द्वारा हो रही थी। कार्यकारी समूह की रिपोर्ट और जुलाई 1975 को तत्कालीन सरकार द्वारा जारी 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम को



दृष्टिगत रखते हुए 26 सितंबर 1975 को भारत सरकार द्वारा जारी अध्यादेश के द्वारा 2 अक्टूबर 1975 में एक तीसरी संस्था "क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक" की स्थापना की गई।^{viii} बाद में इस अध्यादेश का स्थान 1976 की क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम ने लिया और देश के अन्य भागों में इन बैंकों का विस्तार किया गया। प्रत्येक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की प्रदत्त पूंजी में केंद्र सरकार, राज्य सरकार और प्रवर्तक बैंक (व्यापारिक बैंक) का हिस्सा 50:15:35 के अनुपात में था। यही अनुपात आज भी है। इन बैंकों को यह जिम्मेदारी दी गई कि वह समाज के सबसे कमजोर तबके को ऋण प्रदान करें। इनकी शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में खोली गई, उनमें से 90% शाखाएं ऐसे ग्रामीण इलाकों में खोली गई जहां पहले बैंकिंग सुविधाएं नहीं थी। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने अपने कुल वितरित ऋण का 90% हिस्सा समाज के सबसे कमजोर तबके को दिया है। सिक्किम और गोवा को छोड़कर देश के सारे राज्यों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित हैं। 1975-86 तक नए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खोले गए। अप्रैल 1987 के बाद केलकर समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए कोई नया क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक नहीं खोला गया है। 2 अक्टूबर 1975 को 5 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के साथ शुरू हुआ सफर दिसंबर 1987 में 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तक जा पहुंचा।^{ix} 1980 में छ: और व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। 1980 के बाद से यह महसूस किया जाने लगा की ग्रामीण साख के लिए एक विशेष बैंकिंग संस्थान को स्थापित किया जाए जो ग्रामीण साख हेतु कार्य कर रही विभिन्न संस्थाओं के कार्यों को समन्वित कर उनकी सहायता कर सकें। 12 जुलाई 1982 को शिवरामन समिति की संस्कृति पर कृषि और ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक (नाबार्ड) की स्थापना की गई।^x नाबार्ड की स्थापना के पूर्व रिजर्व बैंक ग्रामीण साख की शीर्ष संस्था के रूप में निम्न तीन विभागों के माध्यम से कार्य कर रहा था—

(क) कृषि ऋण विभाग (ACD)— इसके माध्यम से रिजर्व बैंक सहकारी समितियों को अल्पकालीन पुनर्वित्त उपलब्ध कराती थी।

(ख) ग्रामीण आयोजन एवं साख सेल (RPCC) —यह संस्था 1979 से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से कार्य व्यवहार के संबंध में थी।

(ग) कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम (ARDC) कृषि पुनर्वित्त निगम की पुनर्वित्त के साथ विकासात्मक एवं संवर्धनात्मक भूमिका को ध्यान में रखते हुए 1975 में कृषि पुनर्वित्त निगम (ARC) का नाम बदलकर कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम (ARDC) कर दिया गया। नाबार्ड की स्थापना के साथ यह तीनों संस्थाएं रिजर्व बैंक से हटकर नाबार्ड का हिस्सा बन गई और तभी से नाबार्ड को ग्रामीण साख की शीर्ष संस्था का दर्जा प्राप्त है। 1988 में व्यापारिक बैंकों ने ग्रामीण साख की दिशा में एक नूतन प्रयोग किया जिसे सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण का नाम दिया गया। इसके अंतर्गत व्यापारिक बैंकों की अर्धनगरीय एवं ग्रामीण शाखाओं को विशेष क्षेत्र सौंपे गए। बैंक शाखाएं अपने क्षेत्र में आने वाले 15 से 25 गांव की साख आवश्यकताओं को पूरा करने की योजना बनाती है।

तृतीय चरण (1991 से अबतक)—1990 तक व्यापारिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंक ने ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त शाखाएं खोली। इसके बाद भी ग्रामीण आबादी का अधिकांश हिस्सा संस्थागत साख से अछूता रहा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए नाबार्ड ने 1992 में "स्वयं सहायता समूह बैंक लिंकेज कार्यक्रम" को कतिपय कारणों से संस्थागत स्रोतों से वंचित रह गये असंगठित क्षेत्रों और ग्रामीण किसानों मुख्यरूप से लघु तथा सीमांत किसानों को साख उपलब्ध करवाने के लिए पायलट प्रोजेक्ट के रूप शुरू किया। यह एक बहुत सफल कार्यक्रम सिद्ध हुआ। नाबार्ड ने इस कार्यक्रम के माध्यम से ग्रामीण आबादी को संस्थागत साख मुहैया कराने के लिए तीन मॉडल को चुना है—



(क) प्रथम माडल में बैंक खुद को स्वयं सहायता प्रोत्साहन संस्थान (SHPI) के रूप में कार्य कर रहे हैं। इस मॉडल को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने विशेष रूप से चुना है। 14% समूह इसी माडल से जुड़े हैं।

(ख) द्वितीय मॉडल में गैर सरकारी संगठन (NGO), सरकारी विभाग/संस्थान स्वयं सहायता प्रोत्साहन संस्थान (SHPI) के रूप में कार्य करते हुए बैंकों से सहायता प्राप्त करते हैं। 70% समूह इसी मॉडल से जुड़े हैं।

(ग) तृतीय मॉडल में समूह और बैंकों के मध्य गैर सरकारी संगठन (NGO) और सूक्ष्म वित्त संस्थान (MFIs) स्वयं सहायता प्रोत्साहन संस्थान (SHPI) के रूप में मध्यस्थता का कार्य करते हैं। लगभग 16% समूह इसी मॉडल से जुड़े हैं।

बैंकों को इच्छानुसार किसी मॉडल को चुनने की स्वतंत्रता प्रदान की गई। 1995-96 में नाबार्ड ने ग्रामीण आधारिक विकास कोष (RIDF) की स्थापना की। इस कोष का उद्देश्य प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को ऋण देने के लक्ष्य से पीछे रह गए अनुसूचित व्यापारिक बैंकों में अब बची हुई राशि बची हुई राशि RIDF में देंगे ताकि उनका लक्ष्य पूरा रहे। RIDF का उद्देश्य राज्य सरकार एवं राज्य सरकार के अधीन कार्यरत निगमों को ऋण मुहैया कराना है ताकि विभिन्न ग्रामीण आधारिक परियोजनाओं जैसे सिंचाई, जलसंभर प्रबंधन, ग्रामीण सड़कों व पुलों का निर्माण आदि को पूरा कर सकें। यह योजना वर्तमान में चल रही है। 22 मार्च 1997 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को लक्षित वर्ग से बाहर के व्यक्तियों को ऋण देने की अनुमति दी गई है। इससे पूर्व यह प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को ऋण देते थे। वित्तीय वर्ष 1998-99 में किसानों की अल्पकालीन साख जरूरतों को पूरा करने के लिए "किसान क्रेडिट कार्ड" (KCC) योजना को शुरू किया। नाबार्ड केसीसी की प्रबंधक इकाई व्यापारिक बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और सहकारी बैंक इसकी वितरक इकाई है। केसीसी के तहत एक सरल प्रक्रिया के द्वारा किसानों को ऋण प्रदान किया जाता है। भसीन कार्यकारी समूह के सुझाव के आधार पर उधारकर्ता को एक एटीएम सह डेबिट कार्ड दिया जाता है। इससे पूर्व किसानों को पासबुक दिया जाता था जो 5 साल तक की अवधि के लिए रहता है। समय और आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए केसीसी में नए परिवर्तन किए जाते रहे हैं। वित्तीय वर्ष 2003-04 में भारत सरकार ने ग्राउंड लेवल क्रेडिट (GLC) नीति को अपनाया। इसके तहत भारत सरकार संघीय बजट में प्रतिवर्ष कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों के लिए GLC लक्ष्य की घोषणा करती है जिसे बैंकों को उसी वित्तीय वर्ष में प्राप्त करना होता है। जून 2004 में भारत सरकार ने फार्म क्रेडिट पैकेज की घोषणा की जिसका उद्देश्य कृषि क्षेत्र में साख के प्रवाह को आने वाले 3 वर्षों में 2006-07 तक वर्तमान स्तर से दोगुना करना था। बाद में इसे GLC के साथ संबद्ध कर दिया गया। ग्राउंड लेवल क्रेडिट ने पिछले कुछ वर्षों से शानदार वृद्धि दिखाई है और यह हमेशा समग्र लक्ष्यों से अधिक बना हुआ है। 2006-07 में ब्याज छूट योजना को सरकार द्वारा लाया गया जिसका लक्ष्य किसानों को 7% प्रतिवर्ष की ब्याज दर पर 3 लाख रुपये तक का अल्पकालीन फसल ऋण प्रदान करना है। समय पर ऋण चुकाने वाले किसानों को सरकार द्वारा 2009-10, 2010-11 और 2011-12 में ब्याज छूट क्रमशः 1%, 2% और 3% प्रदान की गई। 2011-12 से ऋण तो किसानों को 7% पर दिया जाता है पर समय सीमा के भीतर भुगतान होने पर अतिरिक्त 3% की छूट दी जाती है जो प्रभावी ब्याज दर को 4% कर देता है। 2013-14 से ब्याज छूट योजना को निजी क्षेत्र के अनुसूचित व्यापारिक बैंकों द्वारा दिए गए फसल ऋण पर लागू किया गया। ब्याज छूट योजना का क्रियान्वयन नाबार्ड और रिजर्व बैंक द्वारा किया जा रहा है। 2005 के बाद देश के कुछ राज्यों में सूक्ष्म वित्त संस्थान (MFIs) ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषकर जहां अपर्याप्त संस्थागत ऋण सुविधाएं थी, बहुत तेजी से विस्तारित हुईं। MFIs पूर्णतया लाभोन्मुखी संगठन हैं, जो ग्रामीण ऋण बाजार में संस्थागत शून्यता को विशुद्ध व्यापार अवसर के रूप में देखते हैं। यह सामाजिक बैंकिंग की भावना के विपरीत काम करते हैं। अतः बाद में इन्हें नए वेश में साहूकार का नाम दिया



गया। 2010 में आंध्र प्रदेश में आये सूक्ष्म वित्त संकट के बाद रिजर्व बैंक ने 2011 मालेगांव समिति का गठन किया। समिति के सुझाव को मानते हुए सरकार ने सूक्ष्म वित्त संस्थान (विकास और नियामक बिल) 2012 द्वारा रिजर्व बैंक को सूक्ष्म वित्त संस्थान का नियामक घोषित किया गया। नाबार्ड ने जून 2012 में को राज्य सरकारों को कहा कि वह अपने-अपने राज्यों में उन सभी किसानों को जो केसीसी की अहर्ता और इच्छा दोनों रखते हैं परंतु उनको केसीसी उपलब्ध नहीं कराया जा सका है, को बैंक शाखा/ग्राम स्तर पर कैंपेन चला कर केसीसी उपलब्ध कराया जाए। सरकार ने 10/2/2020 से अप्रैल 2020 तक केसीसी सैचुरेशन अभियान शुरू किया। अभियान के तहत पात्र किसानों को 1.76 लाख करोड़ के स्वीकृत ऋण सीमा के साथ कुल 1.87 करोड़ नए केसीसी जारी किए गए। पशुपालन और मत्स्यपालन के कार्य में लगे हुए किसानों को ब्याज में छूट के लाभ के साथ-साथ केसीसी की सुविधा प्रदान की गई। 31 जनवरी 2020 तक पूरे देश में 67602109 सक्रिय केसीसी थे। 10 दिसंबर 2021 को 14 लाख केसीसी पशुपालन और डेयरी किसानों को दिए गए। 17 दिसंबर 2021 को 67581 केसीसी मत्स्यपालक किसानों और मछुआरों को दिया गया। केसीसी फसल ऋण और उपभोग ऋण दोनों को पूरा करता है। जुलाई 2014 में रिजर्व बैंक द्वारा लघु वित्त बैंक की अवधारणा को लाया गया। यह वह बैंक होंगे जिन्हें बिना किसी ऊपरी सीमा के जमा स्वीकार करने तथा उधार देने की अनुमति होगी। छोटे किसानों तथा असंगठित इकाइयों को ऋण देंगे। अपनी साख का 75% प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में लगाना होगा। 2013-14 से 2019-20 की अवधि में GLC 7.30 लाख करोड़ रुपए से दोगुना होकर के 13.92 लाख करोड़ पर हो गया। 2020-21 और 2021-22 GLC लक्ष्य क्रमशः 15 लाख करोड़ रुपए और 16.50 लाख करोड़ रुपए का है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- Reserve Bank Of India Handbook of Statistics on Indian Economy, 2011-12 & 2015-16
- Ministry of Statistics & Programme Implementation(17.06.2021)
- Dutta & Sundaram, Indian Economy, 2008, pp 404
- <https://tradingeconomics.com>
- Singh, Ramesh. Indian Economy, 8th Edition, pp 8.3
- Gupta, RK & Garg, Arun Kumar & Garg, Anju. Money & Banking, pp 379
- Banking Statistics, 1972
- Handbook of Statistics on Indian Economy, 2006-07 Table 3.22
- Handbook of Statistics on Indian Economy, 2006-07 Table 3.22
- Lal & Lal, Indian Economy Survey & Analysis, 2017, pp 8.30
- Gupta, RK & Garg, Arun Kumar & Garg, Anju. Money & Banking, pp 389
- Lal & Lal, Indian Economy Survey & Analysis, 2017, pp 4.13

Cite this Article:

सिंह, आलोक प्रताप, (2025). भारत में संस्थागत कृषि साख की व्यवस्था, The Research Dialogue, Open Access Peer-reviewed & Refereed Journal, 3(1), pp.09 – 15. <https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v4i3.02>



This is an Open Access Journal / article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License CC BY-NC-ND 3.0) which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited. All rights reserved



CERTIFICATE

of Publication

This Certificate is proudly presented to

आलोक प्रताप सिंह

For publication of research paper title

“भारत में संस्थागत कृषि साख की व्यवस्था”

Published in ‘The Research Dialogue’ Peer-Reviewed / Refereed Research Journal
and E-ISSN: 2583-438X, Volume-04, Issue-03, Month October, Year-2025.

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Editor- In-chief



Dr. Neeraj Yadav
Executive-In-Chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at: <https://theresearchdialogue.com/>

DOI: <https://doi.org/10.64880/theresearchdialogue.v4i3.02>